प्रवेशांक
शोधामृत
(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की अर्धवार्षिक, सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित शोध पत्रिका)

Online ISSN-3048-9296
Vol.-1; issue-1 (Jan-Jun) 2024
Page No- 26-30

©2024 Shodhaamrit (Online)
www.shodhamrit.gyanvividha.com

डॉ. संदीप कुमार
शिक्षक: सरदार सिंह कॉलेज ऑफ़ एजुकेशन, सोराना, सरसावा, सहारनपुर, उत्तर प्रदेश

Corresponding Author :
डॉ. संदीप कुमार
शिक्षक: सरदार सिंह कॉलेज ऑफ़ एजुकेशन, सोराना, सरसावा, सहारनपुर, उत्तर प्रदेश

योग-ऋषि स्वामी दयानन्द सरस्वती के अस्पृश्यता निवारण हेतु दार्शनिक विचार

शोधसार- अस्पृश्यता समाज की प्रमुख समस्या रही है। अस्पृश्यता के कारण ही कथित उच्च जाति के लोग समाज मे कथित निम्न जाति के लोगों से आपसी मेल मिलाप, सामाजिक सम्बन्ध,उनके साथ रहना या उनके साथ खान-पान को भी अनुचित मानते है। आज भी अनेक ग्रामीण क्षेत्रो में कुछ निम्न जाति के लोग इस दंश को झेल रहे है वें गाँव के एक कोने मे अपनी बस्ती बनाकर जीवन बसर करते हैं। इस दंश के निवारण हेतु वैसे तो समय-समय पर अनेक समाज चिंतको ने अनेक कार्य किए जिनमे आधुनिक भारत मे डॉ बी०आर अंबेडकर का नाम अग्रणीय आता है वही आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती का भी अस्पृश्यता के निवारण हेतु उल्लेखनीय योगदान है उन्होने वैदिक-समाज के आधार पर इस समस्या का निवारण कर सामाजिक समानता के साथ- साथ आपसी रहन-सहन सात्विक खान-पान आदि को भी उचित माना है। इसी संबंध मे ऋषि दयानन्द के कुछ दार्शनिक विचार इसी प्रसंग में प्रस्तुत किए गए है।

कूटशब्द- सामाजिक समानता, अस्पृश्यता, वैदिक-समाज, जातिगत उत्पीड़न, वर्ण व्यवस्था, ब्राह्मण,क्षत्रिय,और वैश्य,शूद्र, जाति व्यवस्था, सामाजिक सामन्जस्य।

समान शिक्षा का अधिकारः- ऋषि दयानन्द ने जातिगत उत्पीड़न का उन्मूलन करने के लिये वैदिक समाज व्यवस्था का विकल्प प्रस्तुत किया है क्योकि इस व्यवस्था के अन्तर्गत जन्मना शूद्र को भी अन्य लोगों के समान अपना विकास करने का अधिकार प्राप्त हैं तथा योग्यता अनुरुप उच्च से उच्चतर पद/ स्थान पाने का अवसर भी उपलब्ध होता था, क्योंकि "वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत प्रत्येक मनुष्य की सामाजिक भूमिका तथा स्तर का निर्धारण जन्म, वंश, लिंग आदि न होकर उसकी रुचि, ज्ञान तथा क्षमता को निर्धारक आधार मानकर किया जाता है।

जैसे अगर कोई यदि शूद्र कुलोत्पन्न बालक विद्याध्ययन के दौरान ब्राहमणत्त्व की योग्यता का प्रदर्शन करता है तो उसके लिये तदनुकूल शिक्षा की व्यवस्था की जाती है”[1]। इस प्रकार “ज्ञानार्जन के लिये शूद्र के बालक को भी अन्य वर्णस्थ की भाँति शिक्षा एवं पद प्रतिष्ठा पाने का समान अधिकार प्राप्त होता हैं”[2]। इसके साथ-साथ स्वामी दयानन्द ने शूद्रों को भी वेद आदि का अध्ययन का अधिकार दिया जाना भी अनिवार्य माना है। प्रस्तुत सन्दर्भ में वेद का मन्त्र उल्लेखनीय है, यथा –

“**यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि ....च स्वाय चारणाय”**[3]

स्वामी दयानन्द ने इस मंत्र के माध्यम से माना है, कि- “ईश्वर ने चारों वर्णों और भृत्य स्त्रियादि और अति शूद्रादि के लिए भी वेदों का प्रकाश किया है। जिससे “सब मनुष्य वेदों को पढ़-पढ़ा और सुन-सुनाकर विज्ञान को बढ़ा के दुःखों से छूटकर आनन्द को प्राप्त हो जो सभी वर्णों हेतु दर्शाया है। वेद ईश्वरीय वाणी है और उसके अध्ययन का सभी को समान अधिकार है”[4] इसी सन्दर्भ में पुनः उनका यह कथन भी उल्लेखनीय है, कि- जो परमेश्वर का अभिप्राय शूद्रादि के पढ़ाने-सुनाने का न होता तो इनके शरीर में वाक् (वाणी) श्रोत (कान) इन्द्रियाँ क्यों रचता ? जैसे परमात्मा ने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, अन्न आदि पदार्थ सबके लिए बनाये हैं, वैसे ही वेद भी सबके लिए प्रकाशित किये हैं। इसलिए वे सभी के लिए वेद की शिक्षा को अनिवार्य मानते है।

वें वर्तमान में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के स्थान पर गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली को लागू करने हेतु समाज को प्रोत्साहित करते हैं, जिसमें सभी अमीर-गरीब के बच्चों को एक छत के नीचे समान शिक्षा दी जा सके। इस सम्बन्ध में स्वामी दयानन्द कहते हैं कि “सभी के लिए पाठशाला में तुल्य वस्त्र, खान-पान, आसन दिये जावे, चाहे वह राजाकुमार या राजकुमारी हो, चाहे दरिद्र के सन्तान हों, सभी तपस्वी हो”[5]। इस प्रकार की व्यवस्था लागू होने पर बाल्यकाल से ही बच्चों के अन्दर से ऊँच-नीच स्वतः ही समाप्त हो जायेगी, क्योंकि गुरुकुलीय शिक्षा व्यवस्था में बिना जाति की जानकारी के सभी शिक्षा प्रारम्भ करते हैं। जिसके बाद बच्चे की योग्यता और कार्यकुशलता के अनुसार वर्ण का निर्धारण होता है।

वर्तमान में आर्य समाज द्वारा स्थापित शैक्षिक संस्थानों में यथा गुरुकुलों एवं डी.ए.वी. स्कूल में बिना किसी भेद-भाव के सभी को शिक्षा के समान अवसर उपलब्ध कराने का उत्तम कार्य आर्य समाज द्वारा भारत के अनेक हिस्सो मे किया जा रहा है इन संस्थानों से शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त अन्य जातियों की भाति निम्न कही जाने वाली जातियों की पृष्ठ भूमि से आने वाले बच्चे भी सरकारी नौकरी के साथ -साथ समाज में बिना किसी जाति भेद-भाव के आर्य समाज के माध्यम से धार्मिक अनुष्ठान आदि भी कर एवं करा रहे है।

इस साथ-साथ वें आपसी रहन-सहन खानपान को भी प्रमुख मानते है, उनके जीवन की एक घटना उल्लेखनीय है- जब स्वामी दयानन्द ने निम्न कही जाने वाली जाति के लोगों हाथ से लाया भोजन ग्रहण किया तो कुछ लोगों ने उनकी आलोचना की और उन पर व्यंग कसने लगे आपने निम्न जाति के यहाँ का भोजन किया है अब आप का धर्म से पतित हो गये तब उन्होंने उन जातिवादी लोगों को समझाते हुए कहा कि- केवल “भोजन दो स्थिति में खाने योग्य नहीं होता प्रथमतः जब यह भोजन अनुचित प्रकार से अर्जित धन से प्राप्त किया गया हो, दूसरा यह स्वच्छता से न बनाया गया हो, चूकि ये लोग कठोर परिश्रम से धन अर्जित करता है, अतः यह भोजन ग्रहण करने योग्य है।”[6] इसलिए स्वामी दयानन्द आपसी खान-पान से छुआछूत की भावना को समाप्त करने की बात करते हैं।

अस्पृश्यता निवारण हेतु अनेक संगठनो का निर्माण- स्वामी दयानन्द और उनके अनुयायियों ने शूद्रों की समस्याओं के निवारण हेतु अनेक सरहानीय कार्य किये जिनमें से कुछ प्रमुख निम्न है। यथा- सार्वजनिक स्थलों के आवागमन हेतु स्वामी दयानन्द ने ऐसी सामाजिक कुरीतियों को दूर करने हेतु गुरुदत्त भवन लाहौर में दलितोद्धार के लिये "दलितोद्धार सभा " का गठन किया। जिसमें कुछ प्रमुख सभा निम्न थी। जिसको डॉ. मधु चौपडा ने क्रमवार दिया है। यथा-

1. “आर्यदलित सभा दीनानगर।
2. अमृतसर अछूतोद्धार सभा।
3. लाहौर मेधा सभा।
4. अछूतोद्धार सभा लखीमपुर।
5. अस्पृश्यता निवारक समिति इलाहाबाद।
6. अछूतोद्धार समिति मेरठ।

7. अस्पृश्यता निवारण संघ बेहर।
8. अछूत सेवक मण्डल।
9. दि ड़िप्रेस्ड़ क्लासेज मिशन सोसाइटी ऑफ इण्ड़िया।
10. अखिल भारतीय दलितोद्धार सभा दिल्ली"[7]

इसके साथ-साथ आर्य समाज ने "सार्वजनिक स्थानों के साथ-साथ आर्य समाज द्वारा दलितों को मंदिर प्रवेश हेतु भी समर्थन किया गया। यद्यपि आर्य समाज मूर्तिपूजा को नहीं मानता लेकिन दलितों के मंदिर प्रवेश का उसने हमेशा समर्थन किया और आंदोलन भी किए"[8] जहाँ "दलित समाज में कुछ जातियाँ सामाजिक बहिष्कार के डर से मृत्यु के पश्चात् हिन्दू रीति-रिवाजों से हटकर मृतक शरीर को गाड़ देते थे, आर्य समाज के अथक प्रयास से पुनः उनको मृतक शरीर को भस्म करने हेतु प्रेरित किया गया इसके लिए दिल्ली की श्रद्धानन्द दलितोद्धार सभा ने मुख्य कार्य किया"[9]।

स्वामी दयानन्द के पश्चात् उनके अनुयायियों ने आज भी कथित शूद्र/दलितोद्धार के नाम पर अनेक संस्थाये संचालित किए हुए है, "आर्य समाज द्वारा संचालित ऐसे कार्यों के सम्बन्ध में डॉ. अम्बेडकर ने प्रशंसा करते हुए लिखा था, कि- लाला लाजपतराय द्वारा अछूतोद्धार हेतु किए जा रहे कार्य भले ही परिपूर्ण न हो, किन्तु अविश्वसनीय नहीं कहे जा सकते इसके साथ-साथ उन्होंने स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा किए गये कार्यों की भी भूरि-भूरि प्रशंसा की।[10]

जाति व्यवस्था का विरोध - स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वर्तमान भारत में प्रचलित हजारों जातियों या उपजातियों का विरोध किया है, इस संबंध में वे कहते है कि समाज में जो आज जातिवाद की प्रथा है उसका वर्णव्यवस्था से कोई भी सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि वर्णव्यवस्था में जन्म के आधार पर वर्ण का स्थान निश्चित नहीं होता परंतु उसके गुणों पर ही वर्ण का निर्धारण किया जाता है इसके विपरीत जाति का आधार जन्म से है कर्मो से नहीं जहॉ पर अगर शूद्र जाति में पैदा होकर वह ब्राह्मण के कार्य करता है तब भी उसको शूद्र ही समझा जाता है और अगर कोई ब्राह्मण जाति में पैदा होकर शूद्रवत् व्यवहार करता है तब भी उसको ब्राह्मण जाति में ही रक्खा जाता है, जिसका स्वामी दयानंद शास्त्रोक्त विरोध करते है वैदिक आधार पर स्वामी दयाननद द्वारा प्रतिपादि वर्णव्यवस्था मे गुणों के आधार पर उसका वर्ण निर्धारण होता है। यथा-जो शूद्रकुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य के समान गुण, कर्म, स्वभाव वाला हो तो वह शूद्र भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य हो जाय वैसे ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य कुलों में उत्पन्न होके उसके गुण, कर्म और स्वभाव शूद्र के समान हो ता वे ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य भी शूद्र हो जाता है।अर्थात् चारों वर्णों में जिस-जिस वर्ण के समान जो-जो पुरुष वा स्त्री हो वह-वह उसी वर्ण में गिनी जावे[11]।

स्वामी दयानन्द उपुर्यक्त जाति व्यवस्था का विरोध कर वैदिक वर्णव्यवस्था को लागू करने का आह्वान करते है और समस्त जाति, उपजातियों को समाप्त कर गुण, कर्म और स्वभाव के अनुसार वर्णव्यवस्था के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य और शूद्र से समाज को चार भागों में विभाजित कर सामाजिक सामन्जस्य को स्थापित किया जाए। आर्य समाज के माध्यम से जतिनिर्मूलन और दलितोद्धार में विषेष दिलचस्पी ली थी इस कार्य हेतु आर्य समाज के माध्य से सन1936 में डॉ0 अम्बेडकर को जात-पॉत तोड़कर अधिवेषन में अध्यक्षता के लिए आमन्त्रित किया था [12]।

अतःसामाजिक सामन्जस्य को स्थापित करने के स्वामी दयानन्द के वैदिक वर्ण व्यवस्था का प्रतिपादन और वर्तमान जाति व्यवस्था का विरोध करना अनिवार्य है जिसकी आज के समय अत्याधिक आवश्यकता है।

अंतर्जातीय विवाह- सामाजिक सामन्जय को बढ़ावा और जाति व्यवस्था को छुढाने हेतु स्वामी दयानन्द ने गुण,कर्म के आधार पर विवाह को प्रोत्साहन दिया है। यथा- ब्रहा्रचर्य्येण कन्या3 युवानां विन्दते पतिम्[13]

उरोक्त मंत्र में वेदोक्त प्रकार ब्रहा्रचर्य पूर्वक पूर्ण विद्या को पढ़के अपने गुणों के सादृष विवाह करने का विधान है। जो पूर्णतः अंतरजातीय विवाह का प्रतिपादन करता है।

आर्य समाज ने 20 फरवरी 1925 में जात-पॉत तोड़कर मण्डल ने अपने वार्षिक अधिवेषन में इसका प्रस्ताव रखते हुए कहा था कि-आज आवश्यकता है कि-खान-पान और विवाह विषयक बन्धनों को उठा दिया जाए,इसलिए यह मण्डल प्रत्येक आर्य युवक-युवती को प्रेरणा देता है कि विवाह आदि के कार्यों में जो मौजूदा बन्धन हैं,उन्हें जान-बूझकर तोड़े और जात-पॉत के बाहर विवाह करें [14]।

वैदिक समाज के आधार पर आर्य समाज द्वारा अंनरजातीय विवाह की समाज में अति महत्ता है जिससे पढा-लिखा वर्ग अपने गुण और कर्मो के आधार पर विवाह कर सके और जाति बन्धन उनके रास्ते में रोडा न बने और आपसी या जातीय मत-भेद पैदा ना हो सके जो कि आज के समय में एक ज्वलन्त समस्या है। जहॉ लडका और लडकी अपने गुणों और कर्मों के अनुसार विवाह करने लिए सहमत हो जाता है वहीं पर परिवार, रिश्तेदार, और उस जाति के लोग इस कार्य का जघन्य अपराध मानते हुए सामाजिक बहिष्कार के साथ-साथ यहॉ तक की लडके- और लडकी को मौत के घाट तक उतार देते है। जो कि समजा में आपसी द्वेष की भावना पैदा करते है।

आपसी सामन्जस्य को बढाने हेतु और जाति के जन्जाल से बाहर निकलकर अन्तरजातीय विवाह के लिए आर्य समाज ने उल्लेखनीय कार्य किये है जो समाज को जोड़ने का कार्य कर जाति व्यवस्था को समाप्त कर आपसी सामन्जस्य को बढावा दिया है-यथा-आज आर्य समाज की प्रेरणा से अनेकों दलित परिवार में उच्च-जाति में तथा उच्च जातियाँ दलित परिवारों में विवाह कर रहे हैं।

धार्मिक अस्पृश्यता का विरोध - भारत में विभिन्न धार्मिक सम्प्रदयों के लोग रहते है,जहॉ एक सम्प्रदाय एकेश्वरवादी है वही दूसरा सम्प्रदाय बहुदेवतावादी भी है कोई पीर को मानता है तो कोई पैगम्बर,ईसा आदि में विश्वास करता है, इसके साथ-साथ हिन्दू धर्म मे तो जाति-आधार पर अलग-अलग जातियों के मंदिर देखे जा सकते है,जिसमे अगर वह मंदिर नीची जतियों द्वारा निर्मित या नीची जतियों के किसी महापुरुष के नाम पर है तो उच्च जातियों की महिला-पुरुष उन मंदिरों मे जाने से कतराते है, जो अस्पृश्यता की भावना को ही दर्शाता है, जो अति विचारणीय मुद्दा है।

धार्मिक अनेकता के संबंध मे स्वामी दयानन्द मानते है कि-सबसे पहले सभी का वेदोंक्त धर्म था परन्तु कुछ समय के बाद सभी ने अपने-अपने तमतान्तर चालायें स्वामी दयानन्द मानते है कि जब तक मिथ्या मत मतान्तर का विराध नहीं होगा तब तक धार्मिक समन्वय की भावना नहीं हो सकती। उन्होंने भारत के धार्मिक क्षेत्र में फैले व्यापक पाखण्डों आडम्बर तथा मिथ्या विश्वासों को चिन्ता की दृष्टि से देखा और अनुभव किया कि वास्तविक धर्म तो नैतिक मूल्यों के पालन तथा जनहित की योजनाओं को क्रियान्वित करने में ही है। वे यह भी अनुभव करते थे कि देश के मध्यकालीन इतिहास में जो विभिन्न मत सम्प्रदाय आदि पनपे है,वे एक दूसरे के विरोध में ही अपनी शक्ति का अपव्यय कर रहे हैं[15]।

आज के समय में धर्म के नाम पर अनेक झगडे और प्रत्येक धर्म अपने सारे नियमों, व्याख्याओं, स्थानाओं, विष्वासों और पूजा-पद्धतियों को अन्तिम सत्य घोषित करता है,क्योंकि उनके अनुसार बस उनका ही धर्म सत्य है और ईश्वरीय हैं अपौरुषेय हैं, बस उनके ही अवतार दूत और धर्म-संस्थापक को सीधे ईश्वर ने अपना संदेष भिजवाया है इस प्रकार की धारणा और हठ समाज में धर्म के नाम पर झगड़े को बढावा देता है। इसलिए स्वामी दयानन्द ने सभी मनुष्य मात्र के लिए एक धर्म बाताया हैं धर्म किन्हीं संकीर्ण मतवादों सा क्रियाकाण्डों का पर्याय न होकर पक्षपातरहित आचरण न्यायुक्त व्यवहार तथा सत्यभाषाण सत्याचरण तथा सत्य के प्रति आग्रह ही वास्तविक धर्म है [16]।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने **अस्पृश्यता की भावना को समाप्त करने के साथ-साथ** सामाजिक सामन्जस्य हेतु आपसी सद्भाव की भावना को बढ़ाने के लिए समाज से विभिन्न बुराईयों/कुरीतियों को दूर करने के लिए प्रयत्न किया है, यथा- सती-प्रथा, विधवा-प्रथा को समाप्त कर पुनर्विवाह का प्रारम्भ करवाना, सभी के लिए समान शिक्षा प्रणाली, वेद आदि शिक्षा हेतु स्त्री एवं दलितों को प्रोत्साहन देना, स्वेदेशी हिन्दी/संस्कृत भाषा को प्रोत्साहन देना, विदेशी वस्तु और भाषा का बहिष्कार कर स्वामी दयानन्द सभी भारतीयों को एक सूत्र में जोडने का कार्य किया है,जिससे भारत से **अस्पृश्यता** की भावना को मूल से समाप्त कर आपसी सामन्जस्य को स्थापित किया जा सके।

सन्दर्भ सूचीः-

1. आर्य डॉ. सोहनपाल सिंह : कार्ल-मार्क्स और ऋषि दयानन्द के समाज दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन, अम्बिका प्रकाशन, ज्वालापुर, 2003, पृ.सं. 283
2. उपर्युक्त , पृ.सं. 286
3. यजुर्वेद 26/2
4. स्वामी दयानन्द : सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, 2008, पृ. 67

5. सरस्वती स्वामी दयानन्द : सत्यार्थ प्रकाश, तृतीय समुल्लास, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, 2008 दिल्ली, पृ. सं. 40
6. चौपडा, डॉ. मधु : भारत के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में आर्यसमाज का योगदान, सत्यम् पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 2006, पृ. 71
7. चौपडा, डॉ. मधु : भारत के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में आर्यसमाज का योगदान, सत्यम् पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 2006, पृ. 76
8. परोपकारी पाक्षिक पत्रिका : परापकारिणी सभा, केसर गंज, अजमेर, जुलाई, 2017, पृ. 07
9. परोपकारी पाक्षिक पत्रिका : परापकारिणी सभा, केसर गंज, अजमेर, जुला., 2017, पृ. 07
10. परोपकारी पाक्षिक पत्रिका : परापकारिणी सभा, केसर गंज, अजमेर, जुला., 2017, पृ. 05
11. सरस्वती स्वामी दयानन्दः सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास,आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट 82 वाँ संस्करण दिल्ली पृ0-78
12. शास्त्री डॉ0 कुशलदेव शास्त्री: आर्य समाज और डॉ0 अम्बेडकर, श्री घूडमल प्रहलादकुमार आर्य धर्मार्थ न्यास,2008,पृ0सं0-27
13. अथर्व0अ03/प्र024/कां011/मं018
14. शास्त्री डॉ0 कुशलदेव शास्त्री : आर्य समाज और डॉ0 अम्बेडकर, श्री घूडमल प्रहलादकुमार आर्य धर्मार्थ न्यास, 2008,पृ0सं0-26
15. भारतीय डॉ0 भवानीलालः स्वामी दयानन्द सरस्वती का व्यक्तित्व एवं विचार,सत्य धर्म प्रकाशन, 1997, पृ0सं0-102
16. द्रोण कृष्णवीरःधर्म सामाजिक सद्भाव और राष्ट्रीयता, राजस्थान प्रकाषन जयपुर, 2010. पृ0सं0-0

•